Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LIV (54), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य में आदिवासियों की सांस्कृतिक अस्मिता का अंतर्संबंध

छबीलाल सिदार* डॉ. आँचल श्रीवास्तव**

*** शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.व्ही. रमन विश्वविद्यालय करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत**
**** सह. प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.व्ही.रमन विश्वविद्यालय करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत**

शोध सारांश – छत्तीसगढ़ का लोक साहित्य यहाँ के मूल निवासियों के जीवन दर्शन को पूर्ण रूप से समृद्ध किया हुआ है। उनकी पहचान का आधाार अर्थात् उनके 'स्व' का बोध 'जल, जंगल तथा ज़मीन' के साथ उनके गहरे जुड़ाव में निहित है। जब हम छत्तीसगढ़ी लोकगीत जैसे 'कर्मा', 'ददरिया' या 'सुआ' सुनते हैं, तो वे केवल संगीत मात्र नहीं होते, अपितु वे यहाँ के मूल निवासियों के सुख-दुख, अपने देवी-देवताओं के प्रति उनकी श्रद्धा तथा प्रकृति के प्रति उनके गहरे सम्मान को दर्शाते हैं। मूल निवासियों हेतु जंगल केवल एक प्राकृतिक संसाधन नहीं है, वरन् यह उनके पूर्वजों से मिली एक विरासत है, एक ऐसा भाव जो उनके लोक साहित्य में पाए जाने वाले गीतों और लोककथाओं के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी जीवित रहता है। उनकी सांस्कृतिक पहचान का एक और महत्वपूर्ण पहलू 'सामूहिकता' की भावना है। जहाँ आधुनिक साहित्य अधिकांशत: व्यक्ति-केंद्रित होता है, वहीं छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य सम्पूर्ण समुदाय को अपने साथ लेकर चलता है और उसे आत्मसात करता है। उनके नृत्यों एवं गीतों में कोई एक अकेला नायक या पात्र नहीं होता, अपितु सम्पूर्ण समुदाय एक साथ, पूर्ण तालमेल के साथ थिरकता और झूमता है। यही सामूहिक भावना उनकी पहचान को अत्यधिक सुदृढ़ बनाती है। छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य एक ऐसे माध्यम के रूप में कार्य करता है जो आधुनिकता के बढ़ते प्रभाव के विरुद्ध मूल निवासियों की परंपराओं, विशिष्ट बोलियों और जीवन जीने के अनूठे माध्यमों की रक्षा करता है। लोक साहित्य एक दर्पण का काम करता है, जिसमें इन मूल समुदायों की गौरवशाली संस्कृति और उनकी अंतरात्मा की स्पष्ट झलक दिखाई देती है।

शब्द कुंजी – लोक साहित्य, सांस्कृतिक अस्मिता, आदिवासी संस्कृति, लोक-कल्याण, लोकगीतों, लोकनृत्यों, लोककथाओं।

प्रस्तावना – भारत की पहचान उसकी विविधा संस्कृतियों से होती है, जहाँ की कलात्मक परंपराएँ हज़ारों साल पुरानी हैं। इस धारती की लोक तथा जनजातीय कलाएँ समाज की जड़ों से गहराई से जुड़ी हुई हैं ये कलाएँ हमारे जंगलों, पहाड़ों, रीति-रिवाजों और सामुदायिक जीवन की एक सुंदर झलक प्रस्तुत करती हैं। सदियों से ये कला रूप एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होते आए हैं। औपचारिक शिक्षा या किताबों के माध्यम से नहीं, अपितु केवल मौखिक परंपरा, आपसी मेल-जोल और बड़ों से सीखकर। जहाँ एक ओर आधुनिक युग और तेज़ी से बढ़ते शहरीकरण ने जनजातीय समुदायों की पारंपरिक जीवन शैली को बदल दिया है, वहीं दूसरी ओर इसने उनकी कला को वैश्विक पहचान दिलाने का एक नया अवसर भी प्रदान किया है। ऐतिहासिक रूप से जनजातीय समुदाय इस राष्ट्र के समाज का सबसे प्राचीन हिस्सा हैं ऐसे लोग जिनका कभी पहाड़ों और जंगलों पर पूर्ण आधिपत्य था। हालाँकि, समय बीतने के साथ, शिक्षित और आधुनिक समाज धीरे-धीरे उन पर हावी होता गया, इसका मुख्य कारण यह था कि आदिवासी संस्कृति लिखित के बजाय मौखिक थी। औपनिवेशिक काल से लेकर आज तक उन्हें विभिन्न नामों से पुकारा गया है, फिर भी, हमारी शिक्षा प्रणाली में अधिकांशत: उन्हें 'पिछड़ा' कहकर एक रूढ़िवादी दायरे में बाँध दिया गया है। इस सोच का दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम यह हुआ है कि व्यापक दुनिया जनजातीय संस्कृति की समृद्धि और गहराई को सही मायने में समझ पाने में विफल रही है तथा यहाँ तक कि जनजातीय बच्चे भी अपनी विरासत पर गर्व महसूस नहीं कर पाए हैं, जिसके वे पूरी तरह से हकदार हैं। यह लेख लोक साहित्य में आदिवासियों के सांस्कृतिक अस्मिता के अंतर्संबंध के गहन महत्व को पहचानने का एक प्रयास है।

छत्तीसगढ़ की आदिवासी संस्कृति पूरी तरह से प्रकृति और आपसी भाईचारे पर आधारित है। यहाँ के मूल समुदायों के लिए, उनका गाँव ही उनके अस्तित्व का केंद्र होता है एक ऐसी जगह जहाँ वे मिल-जुलकर और सौहार्दपूर्ण ढंग से रहते हैं तथा अपनी सदियों पुरानी परंपराओं को सहेजकर रखते हैं। उनकी अपनी अलग भाषाएँ हैं, जैसे गोंडी और हल्बी, जो उनके इतिहास को सुरक्षित रखने का काम करती हैं। आस्था के मामले में इन समुदायों का प्रकृति के साथ गहरा जुड़ाव है, वे जंगलों, पहाड़ों और नदियों को देवताओं के रूप में पूजते हैं और उनका मानना है कि एक समृद्ध जीवन सुनिश्चित करने के लिए प्रकृति की रक्षा करना अत्यंत आवश्यक है। उनकी खान-पान की आदतें और जीवनशैली भी इस धारती से ही गहराई से जुड़ी हुई हैं। अपने खेतों में अनाज उगाने के अलावा वे जंगलों से इकट्ठा किए गए फलों और कंद-मूल पर भी निर्भर रहते हैं यह एक ऐसी प्रथा है जो पर्यावरण की दृष्टि से भी टिकाऊ है। उनके पहनावे में चमकीले, हाथ से बने वस्त्र शामिल होते हैं, जो उनकी अनूठी पहचान की एक दृश्य अभिव्यक्ति के रूप में सामने आते हैं।

लोक साहित्य – लोक साहित्य समाज के हर वर्ग से अविभाज्य रूप से जुड़ा हुआ है। लोक साहित्य का अर्थ है 'साहित्य का वह स्वरूप, जिसमें आम

लोगों के दैनिक जीवन के अनुभव और उनकी अभिव्यक्तियाँ परिलक्षित होती हैं।' लोकसाहित्य के क्षेत्र में सन् 1990 के बाद से महत्वपूर्ण बदलाव देखे गए हैं। वैश्वीकरण के दौर ने लोक-जीवन पर सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों तरह के प्रभाव डाले हैं तथा इन प्रभावों की वास्तविकता लोक साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। डॉ. सत्येन्द्र के अनुसार 'लोक मानव समाज का वह वर्ग है जो अभिजात्य-बोध, शास्त्रीय औपचारिकता और पांडित्य के अहंकार से मुक्त होता है तथा जो एक जीवंत परंपरा के निरंतर प्रवाह में विद्यमान रहता है।'

समाज में होने वाली हर हलचल लोकसाहित्य में अपना स्थान पा लेती है। यह साहित्य सामाजिक जागरण का उद्देश्य पूरा करता है और इसमें एक सुप्त समाज को जगाने की शक्ति होती है। लोकसाहित्य में सृजनात्मकता को सर्वोपरि माना जाता है, क्योंकि प्राचीन काल से लेकर आज तक इसने निरंतर लोक-कल्याण की शक्ति के रूप में अपनी भूमिका सिद्ध की है। यह बात बिल्कुल सही कही गई है कि 'कला, कला के लिए होती है' और लोकसाहित्य के संदर्भ में यह कला लोकगीतों, लोकनृत्यों, संगीत, मुहावरों और लोककथाओं जैसे विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होती है। भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है जहाँ विविध धर्मों और संस्कृतियों के लोग एक साथ रहते हैं; परिणामस्वरूप इनमें से प्रत्येक समूह का लोकसाहित्य अपनी विशिष्ट भाषा और सांस्कृति से समृद्ध है। अनेक धार्मिक आस्थाओं जैसे हिंदू धर्म, इस्लाम, सिख धर्म और ईसाई धर्म के अस्तित्व के बावजूद उन सभी का लोकसाहित्य के साथ एक मूलभूत जुड़ाव है। समकालीन विमर्श में साहित्य की प्रमुख विषय-धाराओं, जिनमें स्त्रियाँ, दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक और पर्यावरण के बीच आदिवासी साहित्य लोकसाहित्य के एक विशिष्ट स्वरूप के रूप में अत्यंत प्रमुखता के साथ उभर रहा है।

आदिवासी की परिभाषा

क्रोबर के मतानुसार – 'जनजातीय लोगों की मुख्य पहचान उनकी साझा संस्कृति है। यदि किसी समूह के सदस्य रीति-रिवाजों और परंपराओं के एक समान समूह का पालन करते हैं, तो वे एक जनजाति का निर्माण करते हैं।'

रिवर्स के मतानुसार – 'जनजातीय लोगों को एक सुसंगत इकाई माना है जो लोग न केवल एक ही बोली बोलते हैं, बल्कि संकट या युद्ध के समय एक ही परिवार की तरह मिलकर काम भी करते हैं।'

डॉ. रमनिका गुप्ता का मत है कि 'प्रकृति और जनजातीय लोग एक-दूसरे के पूरक हैं। प्राकृतिक संसाधानों और अपनी मूल भाषा के बिना किसी जनजातीय व्यक्ति की पहचान की कल्पना भी नहीं की जा सकती, वास्तव में वे इस ज़मीन के मूल निवासी हैं।'

आदिवासी लोक साहित्य की विशेषताएँ– आदिवासी लोक साहित्य की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

- **भाषाई विविधाता** – भारत में विभिन्न आदिवासी समुदायों की अपनी अलग-अलग भाषाएँ और बोलियाँ हैं। यह भाषाई विविधाता आदिवासी लोक साहित्य में परिलक्षित होती है, जो स्थानीय और सांस्कृतिक संदर्भों को उजागर करती है।
- **विद्रोह तथा संघर्ष की आवाजें** – आदिवासी लोक साहित्य उनके शोषण, दमन और अपने अधिकारों की रक्षा के लिए किए गए संघर्षों तथा विद्रोहों का एक दस्तावेज़ है। यह साहित्य साम्राज्यवादियों, ज़मींदारों और बाहरी आक्रमणकारियों के खिलाफ उनकी लड़ाइयों, साथ ही उनके ऐतिहासिक संघर्षों का गवाह है।
- **वाचिक परंपरा** – आदिवासी लोक साहित्य मुख्य रूप से मौखिक परंपरा पर आधारित होता है, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी बातचीत, गीतों या कहानियों के माध्यम से आगे बढ़ता है। लिखित रूपों पर निर्भर रहने के स्थान पर यह कहानियों, गीतों, लोककथाओं और नृत्य-नाटकों के माध्यम से अनुभवों, मान्यताओं और परंपराओं को जीवित रखते हैं।
- **कृषि और पशुपालन पर आधारित जीवनशैली** – उनका लोक साहित्य ग्रामीण जीवन के विभिन्न पहलुओं, कृषि गतिविधियों, पशुपालन और शिकार पर विशेष ज़ोर देता है। बदलते मौसम और खेती से जुड़ी खुशियाँ तथा कठिनाइयाँ इन सभी को उनके गीतों और कहानियों में प्रमुखता से दर्शाया गया है।
- **नैतिक और सामाजिक शिक्षा** – यह साहित्य आने वाली पीढ़ियों को नैतिक शिक्षा प्रदान करने का एक माध्यम भी है। कहानियों और गाथाओं के माध्यम से बच्चों को साहस, सत्यनिष्ठा, सूझ-बूझ और नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी जाती है।
- **सामूहिकता और सामाजिक न्याय** – आदिवासी समाज में, व्यक्ति की तुलना में समुदाय और सामूहिकता को अधिक महत्व दिया जाता है। उनका साहित्य सामूहिक प्रयास, सहयोग और सामाजिक न्याय की अवधारणाओं पर विशेष धयान केंद्रित करता है।
- **धार्मिक आस्थाएँ और पारंपरिक मान्यताएँ** – उनके साहित्य में देवी-देवताओं, पूर्वजों की पूजा, प्रकृति की शक्तियों और विशिष्ट धार्मिक अनुष्ठानों का विस्तृत चित्रण मिलता है। यह उनकी आधयात्मिक और धार्मिक पहचान को संरक्षित रखने का कार्य करता है।
- **सरलता और स्वाभाविकता** – आदिवासी साहित्य की भाषा और शैली अत्यंत सरल, सहज और स्वाभाविक होती है। यह किसी भी प्रकार की जटिलता या भारी-भरकम साहित्यिक अलंकरणों के बोझ से मुक्त होती है, क्योंकि इसका मुख्य उद्देश्य भावनाओं को स्पष्ट और सीधो तौर पर व्यक्त करना होता है।
- **प्रकृति के साथ गहरा जुड़ाव** – आदिवासी जीवन और साहित्य प्रकृति के साथ गहराई से जुड़े हुए हैं। उनके साहित्य में जानवरों, पक्षियों, पेड़ों, पौधों, नदियों और पहाड़ों का विस्तृत चित्रण मिलता है ये ऐसे तत्व हैं जो उनके जीवन का एक अभिन्न अंग हैं।

आदिवासी लोक साहित्य का महत्व – वर्तमान युग की पहचान वैचारिक और तकनीकी क्रांतियों से होती है, जिन्होंने लोकसाहित्य को उसके पारंपरिक दायरे से मुक्त करके उसे एक 'आधुनिक और परिवर्तनकारी' स्वरूप प्रदान किया है। जहाँ एक ओर वैश्वीकरण और बाज़ारीकरण ने समाज में एक सूचना क्रांति का सूत्रपात किया है, वहीं दूसरी ओर व्यक्तिवाद के बढ़ते प्रभाव के कारण लोकसाहित्य में निहित पारंपरिक 'सामूहिकता' में गिरावट आई है। आज लोकसाहित्य केवल 'ग्राम्य साहित्य' तक ही सीमित नहीं रह गया है, बल्कि अब यह ग्रामीण और शहरी दोनों ही परिवेशों की क्षेत्रीय बारीकियों को अपने में समेटे हुए है। आज अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान और अनूठे स्वरूप के बल पर यह एक प्रकार के 'जातीय साहित्य' के रूप में उभर रहा है जो दलित और आदिवासी विमर्शों के रूप में मुखर हो रहा है और इस प्रकार इसकी प्रासंगिकता तथा लोकप्रियता को और भी अधिक बढ़ा रहा है।

सांस्कृतिक अस्मिता के निर्माण में योगदान – ये परंपराएँ केवल उल्लास के पर्व ही नहीं हैं, अपितु वे बुनियादी स्तंभ हैं जो किसी समाज की सांस्कृतिक

पहचान को आकार देते हैं। यह तथ्य कि ये परंपराएँ जनजातीय लोकगीतों, वेशभूषा और लोककथाओं में जीवंत रूप में आज भी विद्यमान हैं, यह दर्शाता है कि संस्कृति कोई स्थिर इकाई नहीं है, वरन् एक निरंतर प्रवाहित होने वाली सामाजिक प्रक्रिया है। आधुनिक युग में ऐसे समय में जब सरकार पर्यटन, शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से इन्हें संरक्षित करने का प्रयास कर रही है, ये परंपराएँ अपनी खोई हुई पहचान को पुनर्जीवित करने और समाज में अपनी जड़ों को पुन: स्थापित करने का एक सशक्त माध्यम बनकर उभरी हैं।

आधुनिकता एवं सांस्कृतिक परिवर्तन

- **आधुनिकता तथा परंपरा के मध्य मतभेद–** आज छत्तीसगढ़ की संस्कृति एक चौराहे पर खड़ी है एक तरफ सदियों पुरानी परंपराएँ हैं, तो दूसरी तरफ तेज़ी से बदलता आधुनिक समाज। जो लोकगीत और लोकनृत्य कभी हमारी पहचान हुआ करते थे, वे अब आधुनिक मनोरंजन और फिल्मी धुनों के गहरे प्रभाव में आ रहे हैं। इस बदलाव के परिणामस्वरूप वे रीति–रिवाज और परंपराएँ, जिनका पालन कभी पूरी पवित्रता और श्रद्धा के साथ किया जाता था, धीरे–धीरे व्यावसायिक आयोजनों या महज़ दिखावटी समारोहों में बदलते जा रहे हैं। वास्तव में कहें, तो आधुनिकता के प्रभाव में आकर हमारी सांस्कृतिक जड़ें कमज़ोर पड़ने लगी हैं।
- **प्रौद्योगिकी एवं शहरीकरण का प्रभाव –** शहरीकरण और आधुनिक शिक्षा ने हमारी सोच को मौलिक रूप से बदल दिया है। शहरों में बढ़ते अकेलेपन के एहसास के कारण, सामूहिक जीवन और सामुदायिक जुड़ाव की वह भावना जो ग्रामीण जीवन की खास पहचान थी अब वह कम होती जा रही है। जहाँ एक ओर शिक्षा ने निस्संदेह जागरूकता बढ़ाई है, वहीं इसने एक बड़ी समस्या को भी जन्म दिया है युवा पीढ़ी अपनी ही परंपराओं को 'पिछड़ेपन' की निशानी के तौर पर देखने लगी है और परिणामस्वरूप उनसे दूरी बना रही है। जहाँ तक प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया की बात है, हालाँकि इन्होंने हमारी कला को दुनिया के सामने लाने का माध्यम बनाया है, लेकिन इंटरनेट पर प्रख्यात होने की होड़ ने लोगों को लोककला के असली स्वरूप से छेड़छाड़ करने पर मजबूर कर दिया है, जिससे उसकी मौलिकता खत्म होती जा रही है।
- **संरक्षण की रणनीतियाँ और आगे का रास्ता –** सबसे बड़ी चुनौती यह सुनिश्चित करना है कि हमारी लोक संस्कृति केवल किताबों या संग्रहालयों तक ही सीमित न रह जाए। इसे बचाने के लिए हमें इसे लोगों के रोज़मर्रा के जीवन का हिस्सा बनाना होगा। इस दिशा में यह ज़रूरी है कि बच्चों को स्कूल के पाठ्यक्रम में ही अपनी संस्कृति के बारे में पढ़ाया जाए और पारंपरिक कला रूपों को भविष्य की पीढ़ियों के लिए डिजिटल रूप से सुरक्षित किया जाए। इसके अतिरिक्त हमारी कला रूपों और सांस्कृतिक उत्सवों को पर्यटन से जोड़कर हम कलाकारों के लिए रोज़गार के अवसर पैदा कर सकते हैं और साथ ही युवाओं में भी इनके प्रति रुचि जगा सकते हैं। यदि हम प्रौद्योगिकी और परंपरा के बीच सही संतुलन बना पाए, तो आने वाले वर्षों में हमारी संस्कृति नि:संदेह और भी अधिक मज़बूत होकर उभरेगी।

सांस्कृतिक धरोहर संरक्षण – छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण एक अत्यंत महत्वपूर्ण और चुनौतीपूर्ण कार्य के रूप में उभरा है, क्योंकि वैश्वीकरण, शहरीकरण और बाज़ार की ताकतों के दबाव के कारण पारंपरिक कला रूप और त्योहार जैसे 'फाग' गीत, 'कर्मा' नृत्य और 'भोजली' धीरे–धीरे लुप्त होने की कगार पर पहुँच रहे हैं। जहाँ एक ओर आधुनिक तकनीक और 'सोशल मीडिया' ने इन लोक कलाओं को बढ़ावा देने के माध्यम के रूप में कार्य किया है, वहीं दूसरी ओर उन्होंने इनके पारंपरिक प्रस्तुतीकरण के मूल स्वरूप को विकृत करने का जोखिम भी पैदा किया है। भविष्य के लिए इन विरासत संपत्तियों को सुरक्षित रखने हेतु, यह शोध–पत्र 'नवोन्मेशी संरक्षण रणनीतियों' पर ज़ोर देता है यह लोक परंपराओं के अनिवार्य डिजिटल अभिलेखीकरण और उन्हें शैक्षिक पाठ्यक्रमों में शामिल करने की वकालत करता है, जिससे नई पीढ़ी अपनी जड़ों से पुन: जुड़ सके। अंतत: भविष्य की दिशा इस बात पर निर्भर करती है कि राज्य सरकार लोक संस्कृति को केवल एक प्रदर्शनकारी तमाशे के रूप में न देखकर, बल्कि एक महत्वपूर्ण 'सांस्कृतिक संसाधन' के रूप में मान्यता दे और डिजिटल मंचों तथा पुरस्कारों के माध्यम से युवाओं को इस समृद्ध विरासत के संरक्षक के रूप में आगे आने के लिए प्रोत्साहित करें।

निष्कर्ष – छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य न केवल इस क्षेत्र के आदिवासी समाज की सांस्कृतिक पहचान का संरक्षक है, बल्कि उनके अस्तित्व का एक अभिन्न अंग भी है। यह साहित्य 'जल, जंगल और ज़मीन' के साथ उनके गहरे जुड़ाव को व्यक्त करता है एक ऐसा लोकाचार जिसमें प्रकृति को केवल एक संसाधान के रूप में नहीं, बल्कि एक पूजनीय विरासत के रूप में देखा जाता है। लोकगीतों और लोककथाओं के माध्यम से यह मुख्य तथ्य उभरकर सामने आता है कि इन आदिवासी समुदायों की पहचान उनकी 'सामूहिकता' की भावना में निहित है एक ऐसी सामूहिक भावना जिसमें समाज को एकजुट रखने की शक्ति है, भले ही आज का युग व्यक्तिवाद का हो। हालाँकि, वैश्वीकरण और शहरीकरण के बढ़ते प्रभाव ने इन पारंपरिक कला रूपों और जीवन मूल्यों के सामने गंभीर चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं, जिसके कारण युवा पीढ़ी अपनी मूल जड़ों से दूर होती जा रही है। छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य एक ऐसे दर्पण का काम करता है जो आदिवासी लोगों के संघर्षों, आस्था और गौरवशाली इतिहास को दर्शाता है। केवल इस विरासत की सुरक्षा करके डिजिटल दस्तावेज़ीकरण, स्थानीय संस्कृति को शैक्षिक पाठ्यक्रम में शामिल करने और नवीन दृष्टिकोणों के माध्यम से ही इन आदिवासी समुदायों की सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित किया जा सकता है। इस प्रकार इस अद्वितीय पहचान की अखंडता को बनाए रखना लोक साहित्य के संरक्षण को केवल एक अकादमिक अभ्यास ही नहीं, बल्कि एक गहन सामाजिक और सांस्कृतिक दायित्व बना देता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उप्रेती, डॉ. हरिशचंद्र. 'भारतीय जनजातियाँ' संरचना एवं विकास, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर : पृष्ठ संख्या 01.
2. गुप्ता, डॉ. रमणिका. आदिवासी कौन, राधाकृष्ण : पृष्ठ संख्या 27.
3. छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य के संदर्भ में डॉ. पीसीलाल यादव का रचनात्मक अवदान (2017) पी–एच.डी. शोध प्रबंध, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) : पृष्ठ संख्या 28
4. मंडल, इंद्रजीत (2021) छत्तीसगढ़ की जनजातियाँ– Ilkogretim Online - Elementary Education Online, 2021; Vol 20 (2) : पृष्ठ संख्या 3978–3996.
5. चौबे रवीन्द्र (2021) छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति. Double-blind, Peer-reviewed, Quarterly, Multidiciplinary and Multilingual Research Journal, SHODH SAMAGAM,

Volume-04, Issue-02 : पृष्ठ संख्या 1713-1719.

6. हजारा, डॉ. अयान (2022) छत्तीसगढ़ में आदिवासी जीवन : एक विश्लेषण. International Journal of All Research Education and Scientific Methods 10(2) : पृष्ठ संख्या 1572-75.
7. शर्मा, डॉ. प्रियंका (2022) जनजातीय साहित्य में सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान का एक अवलोकन. International Journal of Creative Research Thoughts, 10(11) : पृष्ठ संख्या 208-211.
8. श्रीवास्तव डॉ. मधुलिका 2023 गोंड़ जनजाति के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन का एक अध्ययन. International Journal of Advanced Research In Science, Communication and Technology, 3, (1) : पृष्ठ संख्या 741.748.
9. ताम्रकार, राजन (2024) छत्तीसगढ़ के लोकगीत संस्कृति और संचार के संरक्षक के रूप में. Innovation and Integrative Research Center Journal, 2(11) : पृष्ठ संख्या 136-150.
10. पटेल, ज्योतिमा और सिंह संजना (2024) छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक संरचना का ऐतिहासिक अनुशीलन : परंपरा, धर्म, लोककला और समकालीन चुनौतियां. *ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts, 5(6) :* पृष्ठ संख्या 3022-3028.
11. निनामा, डॉ. केशरीमल (2025) लोक साहित्य में आदिवासी जन जीवन- International Journal of Creative Research Thoughts, 10(1) : पृष्ठ संख्या 99-103.

****